भाव); **आर्जवम्** =मन-वाणी की सरलता; **आचार्य उपासनम्** =ज्ञान-प्राप्ति के लिए योग्य गुरू का श्रद्धा-भक्ति सहित निश्छल भाव से सेवन करना; **शौचम्** =बाहर-भीतर की पवित्रता; **स्थैर्यम्** =भगवत्प्राप्ति के मार्ग में दृढ़ निष्ठा; **आत्म-विनिग्रहः** =आत्मसंयम; **इन्द्रिय अर्थेषु** =शब्द आदि इन्द्रियविषयों में; **वैराग्यम्** =रुचि (आसक्ति) का अभाव; **अनहंकारः एव** =मिथ्या अभिमान का भी अभाव; **च** =तथा; **जन्म** =जन्म; **मृत्यु** =मृत्यु; **जरा** =वृद्धावस्था; **व्याधि** =रोग आदि में; **दुःख** =दुःख; **दोष** =दोषों का; **अनुदर्शनम्** =बारम्बार चिन्तन करना; **असक्तिः** =आसक्ति का अभाव; **अनभिष्वंगः** =ममता का न होना; **पुत्र** =पुत्र; **दार** =स्त्री; **गृहादिषु** =घर आदि में; **नित्यम्** =सदा; **च** =तथा; **समचित्तत्वम्** =मन की समता (हर्ष-विषाद आदि विकारों का न होना); **इष्ट** =अनुकूल; **अनिष्ट** =प्रतिकूल की; **उपपत्तिषु** =प्राप्ति में; **मयि** =मुझ में; **च** =तथा; **अनन्ययोगेन** =शुद्धभाव से; **भक्तिः** =भक्ति; **अव्यभिचारिणी** =अहैतुकी, अप्रतिहता; **विविक्त** =निर्जन; **देश** =स्थान का; **सेवित्वम्** =सेवन; **अरतिः** =अनासक्ति; **जनसंसदि** =जनसमाज में; **अध्यात्मज्ञान** =आत्मज्ञान में; **नित्यत्वम्** =नित्य स्थिति; **तत्त्वज्ञान** =परम सत्य का ज्ञान; **अर्थ** =प्रयोजन; **दर्शनम्** =दर्शन; **एतत्** =यह सब; **ज्ञानम्** =ज्ञान है; **इति** =ऐसे; **प्रोक्तम्** =कहा है; **अज्ञानम्** =अज्ञान है; **यत्** =वह जो; **अतः** = इसके; **अन्यथा** =विपरीत है।

अनुवाद

विनम्रता, दम्भाचरण का अभाव, प्राणीमात्र को किसी भी प्रकार से पीड़ित न करना, क्षमाभाव, मन-वाणी की सरलता, सद्गुरु के शरणागत होकर उनकी सेवा करना, भीतर-बाहर की शुद्धि, स्थिरता तथा आत्मसंयम; इन्द्रिय-भोगों में आसक्ति का अभाव, अहंकार का भी अभाव; जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधि में दुःख-दोषों को बारंबार चिन्तन करना; पुत्र, स्त्री तथा घर आदि में आसक्ति और ममता का न होना; अनुकूल और प्रतिकूल की प्राप्ति में चित्त की समता; निरन्तर मेरे शुद्ध और अनन्य भक्तियोग का आचरण, एकान्तवास, विषयी जनसमुदाय में प्रीति का अभाव, स्वरूप-साक्षात्कार में नित्य दृढ़ निष्ठा तथा परमसत्य का दार्शनिक अन्वेषण—इस सब को मैं ज्ञान घोषित करता हूँ। इससे विपरीत जो कुछ भी है, वह सब अज्ञान है।।८-१२।।

तात्पर्य

कभी-कभी अल्पज्ञ मनुष्य भ्रम से इस ज्ञानपथ को क्षेत्र का विकार समझ बैठते हैं। वास्तव में तो केवल यही ज्ञान का सच्चा पथ है। यदि इस मार्ग को अंगीकार कर लिया जाय, तो परम सत्य की प्राप्ति हो सकती है। यह पूर्ववर्णित दस तत्त्वों का विकार नहीं है; अपितु उनसे मुक्त होने का साधन है। ज्ञान-पद्धति के सम्पूर्ण विवरण में सबसे महत्त्वपूर्ण साधन का उल्लेख दसवें श्लोक में है—अनन्य भक्तियोग, जो सम्पूर्ण ज्ञान का पर्यवसान है। इसलिए यदि कोई दिव्य भगवत्सेवा नहीं करता, अथवा उस स्तर तक नहीं पहुँच पाता, तो शेष उन्नीस साधनों से उसे कोई